साप्ताहिक
Live not just breaTHE

MPHIN/2015/63220
MP/IDC1528/16-18

दि कार्मिक पोस्ट

वर्ष : 7, अंक : 29 (प्रति बुधवार), इन्दौर 9 मार्च 2022 से 15 मार्च 2022 पेज : 8 कीमत : 3 रुपये

2040 तक बढ़ जाएंगी अल नीनो की घटनाएं, क्या जलवायु परिवर्तन का भी है इसमें कोई हाथ

मुंबई। विश्वविद्यालय से जुड़े वैज्ञानिकों के अनुसार 2040 तक उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में अल नीनो की घटनाएं काफी बढ़ सकती हैं। जिसके पीछे कहीं न कहीं तापमान में होती वृद्धि का भी हाथ है। गौरतलब है कि अल नीनो वैश्विक मौसम में उतार-चढ़ाव से जुड़ी घटना है। यूनिवर्सिटी ऑफ एक्सेटर के शोधकर्ताओं द्वारा किया यह अध्ययन अंतराष्ट्रीय जर्नल नेचर क्लाइमेट चेंज में प्रकाशित हुआ है।

अपने इस अध्ययन में शोधकर्ताओं ने जलवायु परिवर्तन के चार अलग-अलग परिदृश्यों में बढ़ते कार्बन उत्सर्जन और अल नीनो की जांच की है जिससे पता चला है कि उन चारों ही परिदृश्यों में अल नीनो घटनाओं के जोखिम में इजाफा देखा गया था। ऐसे में वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि यदि जलवायु परिवर्तन और बढ़ते उत्सर्जन से निपटने के लिए अभी जरुरी कदम न उठाए गए तो अल नीनो और चरम मौसमी घटनों की संख्या में कहीं ज्यादा वृद्धि हो जाएगी। एक्सेटर विश्वविद्यालय और इस शोध से जुड़े प्रमुख शोधकर्ता जून यिंग के अनुसार पिछले शोधों से इस बात की पुष्टि हो चुकी है। उनके अनुसार पूर्वी भूमध्यरेखीय प्रशांत क्षेत्र में वर्षा में आते बदलावों के आधार पर अल नीनो को मापने पर मॉडल का पूर्वानुमान है कि इन घटनाओं के बारे-बार घटने की संभावनाएं कहीं ज्यादा बढ़ जाएंगी। अध्ययन में यह भी सामने आया है कि अल नीनो की घटनाओं में यह बदलाव अगले दो दशकों के बाद ही सामने आने लगेंगे। बदलाव की शुरुआत कब होगी इस बारे में अत्याधुनिक जलवायु मॉडल से पता चला है कि सभी चारों उत्सर्जन परिदृश्यों में अल नीनो से जुड़े बारिश के पैटर्न में आते बदलावों को देखते हुए यह माना जा सकता है कि यह बदलाव 2040 में सामने आने लगेंगे। शोध के मुताबिक 2070 के उत्सर्जन परिदृश्य की परवाह किए बिना अल नीनो-दक्षिणी दोलन (ईएनएसओ) से सम्बंधित वर्षा में आते बदलाव 30 साल पहले ही सामने आने लगेंगें। इस बारे में एक्सेटर विश्वविद्यालय और ग्लोबल सिस्टम्स इंस्टीट्यूट से जुड़े मैट कॉलिन्स का कहना है कि उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में वर्षा समुद्री सतह के तापमान (एसएसटी) से जुड़ी होती है। ऐसे में सतह के तापमान में आने वाला सापेक्ष परिवर्तन, पूर्ण परिवर्तन से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण होता है। गौरतलब

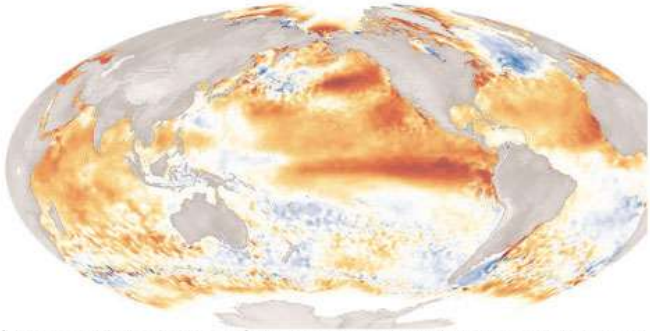

है कि अल नीनो एक ऐसी घटना है जिसमें पूर्वी उष्णकटिबंधीय प्रशांत महासागर के सतही जल का तापमान असामान्य रूप से 4 से 5 डिग्री सेल्सियस तक गर्म हो जाता है और उसका बहाव पूर्व की ओर होने लगता है। दुनिया भर में न केवल वैज्ञानिक बल्कि आम लोग भी इस घटना के बारे में अधिक से अधिक जानना चाहते हैं क्योंकि प्रशांत महासागर में घटने वाली यह मौसमी घटना दुनिया भर में जलवायु, पारिस्थितिकी तंत्र और समाज को प्रभावित करती है, जिसमें भारत भी अछूता नहीं है। यह चरम मौसमी घटनाएं दुनियाभर में न केवल बाढ़ और सूखे के लिए जिम्मेवार होती है साथ ही इनका असर स्वास्थ्य, कृषि और खाद्य सुरक्षा पर भी पड़ता है। इस बारे में जर्नल नेचर कम्युनिकेशन्स में अक्टूबर 2021 में प्रकाशित एक शोध के हवाले से पता चला है कि अल नीनो जैसी मौसमी घटनाएं बच्चों में कुपोषण के खतरे को और बढ़ा सकती हैं। ऐसा ही कुछ 2015 में अल नीनो की घटना के दौरान भी सामने आया था जिसके चलते करीब और 60 लाख बच्चे कुपोषण का शिकार बन गए थे। इतना ही नहीं चिकनगुनिया, डेंगू, मलेरिया, हंतावायरस, हैजा, प्लेग और जीका जैसी बीमारियां भी अल नीनो के कारण आने वाली मौसमी घटनाओं से प्रभावित होती हैं।

वायु प्रदूषण में बदलाव से एशिया में सूखा और यूरोप में चलती है लू- शोध

यूरोप। दक्षिण पूर्व एशिया में वायु प्रदूषण के बढ़ने से तथा यूरोप में प्रदूषण घटने के साथ, हाल के दशकों में यूरोपीय और एशियाई मौसम के पैटर्न पर एक महत्वपूर्ण असर पड़ सकता है। इस बात का खुलासा एक नए शोध में किया गया है। रीडिंग विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों द्वारा मौसम के रिकॉर्ड और जलवायु मॉडल का विश्लेषण किया गया है। विश्लेषण से पता चला है कि दो क्षेत्रों में वायु प्रदूषण के स्तर में बदलाव से हो सकता है कि वायुमंडलीय परिस्थितियों को बदलने के पीछे एक शुरुआती शक्ति थी, जो यूरोप में लंबे समय तक गर्मियों को चरम स्तर तक पहुंचाती थी, साथ ही साथ मध्य एशिया में सूखा पैदा करती थी।

नेचर कम्युनिकेशंस में प्रकाशित नए शोध से पता चलता है कि 1979-2019 के दौरान वायु प्रदूषण में बदलाव ने दोनों क्षेत्रों के बीच तापमान में उतार-चढाव को कम किया, जिससे एशिया में जेट स्ट्रीम काफी कमजोर हो गई। ये बहुत ऊंचाई वाली हवाएं उत्तरी गोलार्ध में वायुमंडलीय प्रसार पर एक मजबूत प्रभाव डालती हैं और पूरे यूरोप और अन्य मध्य-अक्षांश क्षेत्रों में मौसम को आकार देती हैं। यूनिवर्सिटी ऑफ रीडिंग के एनसीएएस वैज्ञानिक डॉ. बुवेन डोंग ने कहा हमारे निष्कर्ष बताते हैं कि वायु प्रदूषण में बदलाव का उत्तरी गोलार्ध के गर्मियों के मौसम पर जितना हमने सोचा था उससे कहीं अधिक प्रभाव डाला था। शोध में पिछले सुझावों का खंडन किया है कि ग्रीष्मकालीन जेट स्ट्रीम का कमजोर होना आर्कटिक में ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन के कारण तेजी से बढ़ते तापमान का परिणाम था। यह विशाल क्षेत्रों में चरम

मौसम को आगे बढ़ाने में इंसानी गतिविधि की एक और महत्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डालता है। वायु प्रदूषण का सतह के तापमान पर सीधा प्रभाव पड़ता है, क्योंकि प्रदूषण के कण सूर्य की गर्मी को जमीन में प्रवेश करने से रोकते हैं। पिछले 40 वर्षों के दौरान चीन और दक्षिण और पूर्वी एशिया के अन्य क्षेत्रों में प्रदूषण में वृद्धि के परिणामस्वरूप सतह का तापमान कम हुआ, जबकि यूरोप में प्रदूषण में कटौती के कारण आसमान साफ और तापमान बढ़ गया। विभिन्न अक्षांशों में तापमान परिवर्तन ने ऊर्ध्वाधर चलने वाली हवा को कम कर दिया और इसलिए गर्मियों में यूरेशियन उपोष्णकटिबंधीय पश्चिमी जेट इसके चलते कमजोर पड़ गई। हवा जो पूर्व में मध्य एशिया और उत्तरी अटलांटिक जेट स्ट्रीम से उत्तरी चीन तक फैला हुआ है। शोधकर्ताओं ने ग्रीनहाउस गैसों और प्रदूषण कणों के प्रभाव को अलग-अलग देखा और पाया कि पूर्व वास्तव में जेट स्ट्रीम की मजबूती का कारण बनता है, लेकिन वायु प्रदूषण के प्रभावों से यह अधिक शक्तिशाली पाया गया। डॉ डोंग कहते हैं कि जैसा कि दक्षिण पूर्व एशियाई देश आने वाले दशकों में अपने वायु प्रदूषण के स्तर में कटौती करने के लिए प्रतिबद्धताओं को पूरा करते हैं। हम उम्मीद करेंगे कि जेट स्ट्रीम एक बार फिर यूरेशिया पर मजबूत होगी, संभावित रूप से लंबे समय तक लू या हीट वेव की आशंका को कम करेगी लेकिन इसके आसार बढ़ जाएंगे और मध्य अक्षांशों में मजबूत चक्रवात का असर दिखेगा।

कैसे बच सकते हैं जंगल, क्या हो एजेंडा

नई दिल्ली। इंडिया स्टेट ऑफ फॉरेस्ट रिपोर्ट 2021 (आईएसएफआर 2021) से बड़ी तस्वीर यह है कि 2019 में पिछले और 2021 में नवीनतम मूल्यांकन के बीच भारत के वन आवरण में मामूली 1.6 लाख हेक्टेयर यानी मात्र 0.2 प्रतिशत की वृद्धि है। यह न तो गर्व करने योग्य है और न ही उल्लेखनीय। वन आवरण में यह वृद्धि राज्य सरकार के वन विभाग के नियंत्रण में रिकॉर्डेड फॉरेस्ट क्षेत्र या वन भूमि के बाहर हुई है। यह वृद्धि मुख्य रूप से उन वनों के चलते हुई है जिन्हें खुले के रूप में वर्गीकृत किया गया है यानी 10 से 40 प्रतिशत के बीच कैनोपी (वितान) घनत्व वाले वनों की बदौलत। इससे पता चलता है कि वन बढ़ रहे हैं क्योंकि लोग अपनी व्यक्तिगत भूमि पर पेड़ लगा रहे हैं। लोग गैर-वन प्रजातियां लगा रहे हैं, क्योंकि भारतीय वन अधिनियम 1927 में सूचीबद्ध पेड़ों को लगाने और काटने पर भारी प्रतिबंध है।

अत- इस वन भूमि में रबड़, नारियल, यूकेलिप्टस और यहां तक कि चाय और कॉफी का पौधारोपण भी शामिल होगा जिनका किसी भी एक हेक्टेयर भूमि में वन आवरण 10 प्रतिशत या अधिक है। अभी रिकॉर्डेड फॉरेस्ट क्षेत्र से बाहर देश के हरित आवरण का बड़ा हिस्सा है। रिकॉर्डेड फॉरेस्ट क्षेत्र से बाहर कुल वन आवरण का 1.972 करोड़ हेक्टेयर अथवा करीब 28 प्रतिशत हरित आवरण है। अगर इसमें 96 लाख (0.96 करोड़) हेक्टेयर के वृक्षावरण को जोड़ दिया जाए तो यह कुल 2.932 करोड़ हेक्टेयर होगा, जो देश के हरित आवरण का 36 प्रतिशत है। भारतीय वन सर्वेक्षण के अनुसार, रिकॉर्डेड फॉरेस्ट के बाहर यह भूमि भी देश में 38 प्रतिशत वन सिंक में योगदान देती है।

वृक्षावरण (रिकॉर्डेड फॉरेस्ट क्षेत्र के बाहर के पेड़) करीब 1 करोड़ हेक्टेयर के निजी भूखंडों में फैले हुए हैं, जो देश में अति सघन वनों के क्षेत्र के बराबर हैं। इनमें आम, नीम, महुआ और इमली प्रमुखता से शामिल हैं। ये प्रजातियां अपने उत्पादकों को आजीविका लाभ प्रदान करती हैं। 70 प्रतिशत से अधिक वितान घनत्व वाले अति सघन वन कुल वनावरण का केवल 14 प्रतिशत (देश के भूमि क्षेत्र का 3 प्रतिशत) हैं। इसमें से 70 प्रतिशत या इससे अधिक आदिवासी के रूप में वर्गीकृत जिलों में मौजूद हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि रिपोर्ट में देश के रिकॉर्डेड फॉरेस्ट के बड़े हिस्से का कोई जिक्र नहीं है। यह क्षेत्र 2.587 करोड़ हेक्टेयर है जो राज्य सरकारों के वन विभाग के अधीन एक तिहाई भूमि के बराबर है। इसलिए, सबसे बड़ी समस्या यह है कि वन विभाग वाले वन नहीं बढ़ रहे हैं और उनकी एक तिहाई जमीन आकलन लायक भी नहीं है। वनावरण बढ़ रहा है, लेकिन इसमें सरकार की कोई भूमिका नहीं है। आईएसएफआर 2021 को यह स्पष्ट करना चाहिए था कि हमें अपनी वन रणनीति पर तत्काल काम करने की जरूरत है। हमें पांचवी पीढ़ी के वन सुधारों की आवश्यकता है। इससे वनों का विकास और आजीविका सुरक्षित करने में मदद मिलेगी। भारत में वन प्रबंधन साम्राज्यवादी ब्रिटिश सरकार के दौरान शुरू हुआ था। अंग्रेजों ने सामुदायिक भूमि सरकार के अधीन करके उसका राष्ट्रीयकरण कर दिया था। वन उनके लिए आर्थिक शोषण को पोषित करने का जरिया भर थे। स्वतंत्रता के बाद पहले चरण तक भारत ने इस दोहनकारी व्यवस्था को जारी रखा। दूसरा चरण 1980 के दशक में शुरू हुआ जब वन संरक्षण अधिनियम बना और इसमें संशोधन हुए। इसमें वनों के डायवर्जन को केंद्रीकृत कर दिया गया। इसको बढ़ावा देने के लिए 1980 के दशक के मध्य में वनों की कटाई रोकने के लिए जागरुकता पर जोर दिया गया। तीसरे चरण में वनीकरण मिशन की शुरुआत हुई। इसमें देशभर में वनों के बाहर अनुपयोगी बंजर भूमि (वेस्टलैंड) पर पेड़ लगाने पर जोर दिया गया। बहुत जल्द यह स्पष्ट हो गया कि वास्तविक बंजर भूमि वन विभाग के नियंत्रण में आती है। यह भी स्पष्ट हो गया कि वनों का अस्तित्व बचाने के लिए जरूरी है कि लोग अपने मवेशियों को बंजर भूमि पर लगाए गए पेड़ों से दूर रखें। लोगों से अपेक्षा की गई कि वे भूमि की रक्षा करें और वनीकरण में सहयोग दें। इसी के मद्देनजर संयुक्त वन प्रबंधन (जेएफएम) की शुरुआत की गई और लोगों को घास जैसे वन उत्पादों पर अधिकार दिया गया। इसके बदले में लोगों को वन भूमि की रक्षा करनी थी ताकि वन बढ़ते रहें। जेएफएम सफल नहीं हो पाया क्योंकि राज्य के वन विभाग की इस योजना में लोगों की भागीदारी सुनिश्चित नहीं हो पाई। वन विभाग भी तभी तत्पर दिखाई दिया, जब वर्षों से संरक्षित पेड़ कटाई के लिए तैयार थे। समझौते के तहत इसका पैसा ग्राम समुदाय को हस्तांतरित किया जाना था। लेकिन देशभर में यह देखा गया कि वन उत्पादों के लिए मिला धन बहुत कम था। यह ग्रामीण समुदाय के साथ मजाक जैसा था। इससे लोगों को भरोसा उठ गया और पेड़ों को फिर से उगाने के आंदोलन को नष्ट हो गया। वर्तमान में चौथा चरण जारी है जिसमें वन संघर्ष के स्थायी युद्धक्षेत्र बन गए हैं। अनुसूचित जनजाति एवं अन्य परंपरागत वनवासी (वनाधिकारों को मान्यता) अधिनियम (एफआरए) 2006 से ऐतिहासिक अन्याय को सुधारने का प्रयास किया गया और भूमि पर समुदायिक अधिकार दिया गया। जनजातीय कार्य मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार, फरवरी 2022 तक करीब 17.1 लाख हेक्टेयर वन भूमि पर व्यक्तिगत अधिकारों का स्वीकृत किया गया है। लेकिन इस भूमि व अन्य क्षेत्रों में वनीकरण की आवश्यकता पर बहुत कम ध्यान दिया जा रहा है। इस तथ्य के बावजूद कि हमारे पास हरित भारत मिशन की कई लुभावनी घोषणाएं हैं और क्षतिपूर्ति वनारोपण के लिए भुगतान के माध्यम से एकत्रित धन है। 2020 में संसद में उठे एक प्रश्न के जवाब में केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने बताया कि मंत्रालय के अधीन कार्यरत क्षतिपूरक वनीकरण कोष प्रबंधन एवं योजना प्राधिकरण (कैंपा) से पेड़ लगाने के लिए करीब 50 हजार करोड़ रुपए राज्यों को हस्तांतरित किए गए हैं। इस फंड से राज्यों में कितने पेड़ लगाए गए हैं और कितने जीवित बचे हैं, इसका कोई आंकड़ा नहीं है। आईएफएसआर 2021 को यह स्पष्ट करना चाहिए कि सरकारी जमीन पर कितने लघु वन उगे हैं। अतीत से सबक लेते हुए पांचवी पीढ़ी के वन सुधारों की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए। कौन से पेड़ काटने हैं, इस पर सोच समझकर फैसला करना होगा। यह तथ्य है कि पहले चरण में देश का वन प्रबंधन शोषणकारी रहा है। चौथे चरण के संरक्षण में निजी भूमि पर उगे पेड़ को काटना अपराध की श्रेणी में है। आज भारत अधिकांश लकड़ी उत्पादों का आयात करता है। जापान स्थित अंतर सरकारी संगठन इंटरनेशनल ट्रॉपिकल टिंबर ऑर्गनाइजेशन की हालिया रिपोर्ट के अनुसार, इस प्रकार के लकड़ी उत्पादों का स्रोत आमतौर पर अफ्रीका व अन्य देशों में जंगलों की अवैध कटाई है। उच्च गुणवत्ता और जैव विविधता से परिपूर्ण अति सघन वन का एक हेक्टेयर हिस्सा खोना भी हम बर्दाश्त नहीं कर सकते। इसलिए इन वनों की बेहद सख्ती से रक्षा की जानी चाहिए और इनका आंकड़ा भी उपलब्ध होना चाहिए ताकि ऐसे क्षेत्रों में किसी परियोजना को मंजूरी न दी जाए। इसके साथ ही यह मान्यता भी दी जाए कि ये बेहद संपन्न वन देश के सबसे गरीब आबादी की रिहाइश हैं। इसका मतलब है कि इन वन भूमि पर सह-अस्तित्व वाले समुदायों को पारिस्थितिक भुगतान के लिए कारगर रणनीतियां बनाना। उन्हें दंडित करने के बजाय वनों की सुरक्षा का पारिश्रमिक देना चाहिए क्योंकि ऐसी भूमि का संरक्षण महत्वपूर्ण है। भारत के उस नक्शे को बदलना चाहिए जहां बाघ विचरण करते हैं, जहां घने जंगल मौजूद हैं, जहां खनिज पाए जाते हैं, जहां नदियों की उत्पत्ति होती है, जहां सबसे गरीब और हाशिए पर खड़े लोग रहते हैं। यह तभी हो सकता है जब हम लोगों को संरक्षण में भागीदार बनाएं और उन्हें बायोटिक प्रेशर मानकर खारिज न करें। 12वें वित्त आयोग ने 2002 में वनों को संरक्षित करने वाले राज्यों को पुरस्कृत करने के लिए राज्य में वनों के क्षेत्र के अनुसार प्रोत्साहन-आधारित अनुदान की स्थापना की थी। 14वें वित्त आयोग ने इस अनुदान के लिए शर्तें हटा दीं जिसका अर्थ है कि राज्य इसका उपयोग करने के लिए स्वतंत्र हैं, लेकिन कोई नहीं जानता इसका इस्तेमाल कहां होता है। ऐसा लगता है कि पारिस्थितिक तंत्र के संरक्षण के लिए भुगतान का विचार खो गया है। यह भुगतान उन समुदायों को किया जाना चाहिए जो संरक्षित और मूल्यवान वनों के पास रहते हैं। यह भुगतान पारिस्थितिक सेवाओं के लिए है क्योंकि संरक्षण उनके बैकयार्ड और उनकी कीमत पर हो रहा है। इसका अर्थ यह भी है कि हमें इन वनों के वास्तविक मूल्य को आंकने की जरूरत है क्योंकि ये आज जैव विविधता संरक्षण के साथ-साथ कार्बन पृथक्करण के लिए महत्वपूर्ण हैं।वन विभाग के अधीन आने वाला विशाल क्षेत्र अवक्रमित (डिग्रेडेड) रहता है और ये क्षेत्र लोगों और उनके पशुओं के आवास भी हैं, इसलिए पेड़ लगाने के लिए समुदायों की भागीदारी जरूरी है। एफआरए में सामुदायिक वन प्रबंधन का प्रावधान है और अब समय आ गया है कि राज्य इस दिशा में काम करें। लेकिन ऐसा करने के लिए पेड़ों को काटना पड़ेगा और दोबारा पेड़ लगाने की जरूरत होगी। इसका मतलब है कि लघु एवं बड़े वन उत्पादों का व्यापार हो। पेड़ों को काटना समस्या नहीं है, समस्या उन्हें फिर से न लगाने और उगाने की है। इस समस्या को दूर किया जाना चाहिए। यह समय आराघर (सॉमिल) लगाने का है ताकि घरों व फर्नीचर में सीमेंट, एल्युमिनियम अथवा स्टील के स्थान पर लकड़ी का उपयोग किया जा सके। हमें लकड़ी आधारित भविष्य की जरूरत है। अगर हम यह काम सामुदाय के लाभ के लिए करें तो यह जलवायु परिवर्तन के लिए भी अच्छा है। यह उनके जीवनयापन और स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं के निर्माण के लिए भी अच्छा है।आईएफएसआर 2021 के अनुसार, लोग अपनी भूमि पर पेड़ लगा रहे हैं लेकिन इस बारे में बात नहीं होती कि यह वृक्षारोपण तमाम मुश्किलों के बाद हो रहा है। आज भारत में पेड़ काटना अपराधिक कृत्य है, भले ही वह निजी भूमि पर उगाया गया हो। लोगों को नहीं पता कि उन्हें इसकी कटाई, परिवहन और बेचने की अनुमति मिलेगी या नहीं। भारतीय वन अधिनियम 1927 के तहत वनों के बाहर के पेड़ों से प्राप्त लकड़ी या अन्य उपज को वन उत्पाद के रूप में माना जाता है। बात यहीं खत्म नहीं होती। राज्य सरकारों ने इसे अपने कई कानूनों से भी जोड़ दिया है। ये कानून पेड़ों की विभिन्न प्रजातियों की कटाई और इसके परिवहन को नियंत्रित करते हैं। वर्तमान में पेड़ों को काटना मुश्किल और उत्पीड़न भरा काम है। यह सच्चाई है कि पेड़ बैंक खातों की तरह होते हैं। एक पीढ़ी जरूरत पड़ने पर इसे लगाती है और दूसरी पीढ़ी काटती है। आज बैंक खाते का भी विमुद्रीकरण अथवा राष्ट्रीयकरण कर दिया गया है। आईएफएसआर 2021 में देश में बांसों की स्थिति का शानदार मूल्यांकन है। अनुमान है कि देश में 5,333.6 करोड़ बांसों के झुरमुट हैं जो 2019 में 1,388.2 करोड़ से अधिक हैं। देश में बांस का अनुमानित क्षेत्र 1.5 करोड़ हेक्टेयर है जो 2021 में कुल वन आवरण का करीब 20 प्रतिशत है। लेकिन इस बड़े संसाधन का सदुपयोग नहीं हो पा रहा है क्योंकि पेड़ों को काटने व परिवहन पर प्रतिबंध है। व्यापक चर्चाओं के बाद 2017 में भारतीय वन अधिनियम, 1927 में संशोधन किया गया ताकि बांस को पेड़ों की परिभाषा व प्रतिबंधों के दायरे से बाहर किया जा सके और गैर वन भूमि में इसकी कटाई और परिवहन हो सके। लेकिन इस मामले में धीमी प्रगति हुई। वनवासियों का तर्क है कि इस सुरक्षा की आवश्यकता है क्योंकि जंगल के अंदर या बाहर उगे पेड़ों के बीच अंतर करना संभव नहीं है।

साभार - डाउन टू अर्थ

झीलों के पानी के तापमान को चरम स्तर तक बढ़ा रहा है जलवायु परिवर्तन

नई दिल्ली। एक नए अध्ययन के अनुसार, दुनिया की सबसे बड़ी झीलें भीषण गर्मी से प्रभावित होती हैं। इस दौरान पानी का तापमान सामान्य से छह गुना बढ़ जाता है। अध्ययन में कहा गया है कि पिछले 20 वर्षों में लगभग सभी झीलें लू या हीट वेव के वजह से गर्म हुए इसके लिए जलवायु परिवर्तन जिम्मेवार हैं। इस तरह की घटनाओं के सदी के अंत तक 3 से 25 गुना तक बढ़ने की आशंका जताई गई है।

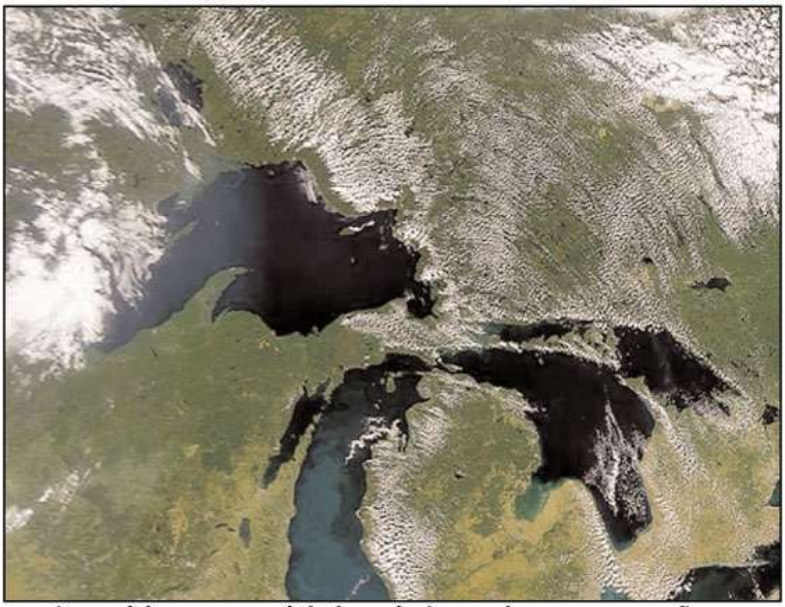

इस अध्ययन में दुनिया की सबसे बड़ी झीलों से सतह के तापमान के दो दशकों के आंकड़ों का विश्लेषण किया गया। ताकि यह पता लगाया जा सके कि झील में लू या हीट वेव कितनी बार आती हैं। इससे पता चलेगा कि इन घटनाओं के लिए मानवजनित जलवायु परिवर्तन कितना जिम्मेवार है। शोधकर्ताओं ने पाया कि झील की गंभीर लू या हीट वेव की घटनाएं औसतन दोगुनी होती जा रहीं हैं। झील की गर्मी से पानी की स्थिति बदल सकती हैं, जलीय पौधों और जानवरों पर दबाव डाल सकती हैं। शैवालों के खिलने और अन्य पानी की गुणवत्ता संबंधी समस्याओं को पैदा कर सकती हैं। यह मापने वाला पहला अध्ययन है कि मानवजनित जलवायु परिवर्तन ने झील की गर्मी या लू को कैसे प्रभावित किया है। एक तरह से दुनिया की झीलें बढ़ते तापमान का मुकाबला कर रही हैं, अध्ययन इस पर एक महत्वपूर्ण और नया दृष्टिकोण पेश करता है। वेल्स में बांगोर विश्वविद्यालय के जलवायु वैज्ञानिक और प्रमुख अध्ययनकर्ता आर. इस्तिन वुलवे ने कहा वास्तव में जो दिख रहा था वह मानवजनित भयावहता थी। हमने जिन झीलों की गर्मी, हीट वेव को देखा, उनमें एक महत्वपूर्ण मानवजनित छाप थी। उन्होंने कहा मनुष्यों के विपरीत, जो एयर कंडीशनिंग में जा सकते हैं या छाया की व्यवस्था कर सकते हैं, लेकिन अत्यधिक तापमान के संपर्क में आने पर जलीय जीवों के लिए बचने के कोई समाधान नहीं हैं। वुलवे ने कहा कि पिछले एक दशक में रिमोट सेंसर डेटा या दूर-संवेदी आंकड़ों में वृद्धि ने इस तरह के अध्ययनों को संभव बना दिया है। जिससे वैज्ञानिकों को एक झील के अध्ययन से दूसरे समान पारिस्थितिक तंत्र में दुनिया में स्थित झीलों में हो रहे बदलावों से निपटने में मदद मिलती है। शोधकर्ताओं ने यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी की मदद से दुनिया भर की 78 बड़ी झीलों के सतह के तापमान के आंकड़ों का विश्लेषण किया। जो कई बिंदुओं से तापमान के नमूने लेने के लिए पर्याप्त थे और यह काम 1995 से 2019 तक किया गया। वुलवे और उनके सहयोगियों ने झीलों से अलग-अलग तीव्रता की लू का पता लगाया, लेकिन उन्होंने एट्रिब्यूशन विश्लेषण को गंभीर या चरम लू के अंतर्गत रखा। लू या हीट वेव की गंभीरता को निर्धारित करने के लिए, शोधकर्ताओं ने सतह के तापमान की विसंगतियों का विश्लेषण किया, या सामान्य परिस्थितियों की तुलना में कितना तापमान अधिक है। एक खतरनाक लू झील की सतह के तापमान को सभी देखे गए तापमानों के मुकाबले 10 फीसदी से ऊपर बढ़ा देती है। वुलवे ने कहा आम तौर पर अगर मनुष्य गर्मी महसूस कर रहे होते हैं, तो झीलें भी गर्मी को महसूस करती हैं। शोधकर्ताओं ने इंटरसेक्टोरल इंपैक्ट मॉडल इंटरकंपेरिसन प्रोजेक्ट से जलवायु मॉडल के साथ ऐतिहासिक तापमान के आंकड़ों को जोड़ा। जलवायु परिवर्तन के तहत झील की प्रतिक्रियाओं का सिमुलेशन करने के लिए एक बड़ा प्रयास किया गया। इसमें यह अनुमान लगाया गया कि मानवजनित जलवायु परिवर्तन ने झील की लू में कितना योगदान दिया है और अनुमान लगाने के लिए कि कितनी बार झील में अगली सदी में लू की लहरें उठेंगी।

शोधकर्ताओं ने पाया कि पूर्व-औद्योगिक तापमान से ऊपर 1.5 डिग्री सेल्सियस ग्लोबल वार्मिंग पर गंभीर और चरम झील की हीट वेव तीन गुना अधिक हो सकते हैं। 3 डिग्री सेल्सियस ग्लोबल वार्मिंग परिदृश्य के तहत, जैसा कि इस सदी में ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में न्यूनतम कटौती के साथ हो सकता है, पूर्व-औद्योगिक जलवायु में इन घटनाओं के सापेक्ष झील की खतरनाक लू की घटनाओं के 25 गुना अधिक होने के आसार हैं। उष्णकटिबंधीय झीलों में मानवजनित योगदान भी अधिक पाए गए। वुलवे ने कहा जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का खामियाजा कम अक्षांश वाले क्षेत्रों को भुगतना पड़ रहा है।

वुलवे ने कहा क्योंकि अध्ययन में केवल बड़ी झीलों को देखा गया है, जो परिवर्तन और गंभीर लू या हीट वेव के लिए अधिक प्रतिरोधी हो सकती हैं। जब हम इन निष्कर्षों को वैश्विक स्तर पर मापते हैं, तो परिणाम बहुत खतरनाक हो सकते हैं।

झील की गर्मी, लू या हीट वेव कई तरह से पारिस्थितिक तंत्र के लिए हानिकारक हो सकती हैं। ऐसे जीवों के लिए जो एक कम तापमान में रहते हैं, पानी के तापमान में छोटे बदलाव से भी उनकी मौत हो सकती है। गर्म पानी का मतलब अधिक वाष्पीकरण और कम मिश्रण भी होता है, क्योंकि झील का पानी ऊपर से गर्म पानी और नीचे ठंडे पानी के साथ मिल जाता है।

इन दोनों प्रभावों का मतलब ऑक्सीजन का कम होना है, जो झील में रहने वालों को मछली की तरह तनाव दे सकता है जिन्हें कि सांस लेने की जरूरत होती है। यह अध्ययन एजीयू जर्नल जियोफिजिकल रिसर्च लेटर्स में प्रकाशित हुआ है।

माउंट एवरेस्ट के इलाके की जलवायु में आ रहा है भारी बदलाव

नई दिल्ली। माउंट एवरेस्ट पृथ्वी पर सबसे ऊंचा पर्वत है जिसके एक ओर चीन तो दूसरी ओर नेपाल है। यह अत्यधिक ग्लेशियरों और विविध परिदृश्यों के लिए जाना जाता है। माउंट एवरेस्ट के इलाके जलवायु परिवर्तन को लेकर सबसे संवेदनशील इलाकों में से एक माने जाते हैं।

हिंद महासागर में बहने वाली लगभग सभी नदियां हिमालय के उत्तरी ढलान से निकलती हैं, जो लगभग 3000 से 4000 मीटर की गहराई के साथ घाटी से बहते हुए आगे बढ़ती हैं। ये नदियां महत्वपूर्ण भू-पारिस्थितिकी के रूप में जानी जाती हैं, हिमालय क्षेत्रीय जलवायु और हिंदू-कुश-हिमालय में पर्यावरणीय परिवर्तनों में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। चाइनीज एकेडमी ऑफ साइंसेज (सीएएस) के नॉर्थवेस्ट इंस्टीट्यूट ऑफ इको-एनवायरनमेंट एंड रिसोर्सेज के शोधकर्ताओं और उनके सहयोगियों ने माउंट एवरेस्ट क्षेत्र में हाल के जलवायु और पर्यावरणीय परिवर्तनों को लेकर खुलासा किया है। शोधकर्ताओं ने बताया कि यह अध्ययन नवीनतम आंकड़ों और मॉडलिंग पर आधारित है। माउंट एवरेस्ट के इलाकों में हवा के तापमान में बदलाव, बारिश, ग्लेशियर और ग्लेशियर से बनी झीलों, नदियों और झीलों के पानी की गुणवत्ता, वायुमंडलीय पर्यावरण और वनस्पति फेनोलॉजी या फिनोलॉजी में हो रहे बदलाव और वर्तमान स्थिति पर गौर किया गया था। बर्फ के कोर और पेड़ के छल्ले से पुनर्निर्मित ऐतिहासिक तापमान रिकॉर्ड के अनुसार, शोधकर्ताओं ने 20वीं शताब्दी के दौरान माउंट एवरेस्ट के इलाकि में तापमान में बढ़ोतरी पाई। अध्ययनकर्ता प्रो. कांग शिचांग ने कहा, माउंट एवरेस्ट क्षेत्र में 1961 से 2018 तक मौसम संबंधी बदलावों के आधार पर 1960 से हर दशक के बाद तापमान लगभग 0.33 डिग्री सेल्सियस बढ़ रहा है। शोधकर्ताओं ने अनुमान लगाया कि माउंट एवरेस्ट के इलाके में आमतौर पर भविष्य में (2006-2099 के दौरान) बढ़ते तापमान की प्रवृत्ति को दिखाता है। सर्दियों में तापमान बढ़ने की दर गर्मियों में प्रतिनिधि एकाग्रता मार्ग या रिप्रेजेन्टेटिव कंसंट्रेशन पाथवे 4.5 और 8.5 के विभिन्न परिदृश्यों की तुलना में अधिक है। उन्होंने आगे बताया कि माउंट एवरेस्ट के इलाके में वर्तमान ग्लेशियर क्षेत्र लगभग 3,266 वर्ग किलोमीटर है, जो 1970 से 2010 तक एक गंभीर रूप से सिकुड रहा है। ग्लेशियर के पीछे हटने से नदी के प्रवाह में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है।

भारत ने वर्ष 2070 तक रखा शुद्ध-जीरो कार्बन उत्सर्जन का लक्ष्य

नई दिल्ली। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने मंगलवार को कहा कि वर्ष 2070 तक शुद्ध-शून्य कार्बन उत्सर्जन सुनिश्चित करने के लिए पर्यावरण के अनुकूल परियोजनाओं में तेजी लाना आवश्यक है। इस तथ्य पर जोर देते हुए कि हरित वित्तपोषण समय की आवश्यकता है, पीएम मोदी ने कहा, भारत ने वर्ष 2070 तक शुद्ध-शून्य कार्बन उत्सर्जन का लक्ष्य निर्धारित किया है। इस पर काम में तेजी लाने के लिए पर्यावरण के अनुकूल परियोजनाओं में तेजी लाना आवश्यक है।

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस की आप सभी को शुभकामनाएं। ये भी गौरव की बात है कि भारत जैसे विशाल देश की वित्त मंत्री भी एक महिला हैं, जिन्होंने देश को इस बार प्रगतिशील बजट दिया है। बजट में सरकार ने तेज़ ग्रोथ के मोमेंटम को जारी रखने के लिए अनेक कदम उठाए हैं। Foreign Capital Flows को प्रोत्साहित करके, Infrastructure Investment पर टैक्स कम करके, NIIF, Gift City, नए DFI जैसे संस्थान बनाकर हमने financial और Economic growth को तेज गति देने का प्रयास किया है। फाइनेंस में डिजिटल तकनीक के व्यापक प्रयोग को लेकर देश की प्रतिबद्धता अब नेक्स्ट लेवल पर पहुंच रही है। 75 जिलों में 75 डिजिटल बैंकिंग यूनिट्स हों, या फिर सेंट्रल बैंक डिजिटल करेंसी, ये हमारे विजन को प्रदर्शित करते हैं। आज देश आत्मनिर्भर भारत अभियान चला रहा है। हमारे देश की निर्भरता दूसरे देशों पर कम से कम हो, इससे जुड़े Projects की Financing के क्या Different Models बनाए जा सकते हैं, इस बारे में मंथन आवश्यक है। पूरे नॉर्थईस्ट का विकास हमारे लिए प्राथमिकता का विषय है। इन क्षेत्रों में आपकी सहभागिता बढ़ाने की दिशा में भी विचार करना जरूरी है। अभी हमने ड्रोन सेक्टर, स्पेस सेक्टर और Gio Special सेक्टर को ओपन किया है।ये बहुत बड़े निर्णय हुए हैं। ये एक प्रकार से game changer हैं। इनमें भी हमें दुनिया के top 3 में जगह बनाने के लिए काम करना चाहिए। आज देश में हेल्थ सेक्टर में बहुत काम हो रहा है। हेल्थ इंफ्रास्ट्रक्चर पर सरकार बहुत निवेश कर रही है। हमारे यहां मेडिकल एजुकेशन से जुड़े challanges को दूर करने के लिए ज्यादा से ज्यादा मेडिकल संस्थानों का होना बहुत जरूरी है।

साभार - डाउन टू अर्थ

अमेरिका में एवियन फ्लू के संक्रमण से पोल्ट्री उद्योग संकट में

न्यूयार्क। अमेरिका एवियन फ्लू की चपेट में है। इससे यहां का पोल्ट्री उद्योग चिंतित है। हालांकि वैज्ञानिकों ने कहा है कि इस फ्लू का असर मुनष्यों पर कम है। लेकिन वैज्ञानिकों ने यह भी चेताया है कि इस प्रकोप से वायरस के उत्परिवर्तित होने पर मनुष्यों में खतरा पैदा करने की आशंका बढ़ जाती है।हाल के हफ्तों में देखा जाए तो अमेरिका के पूर्वी हिस्से में एवियन इन्फ्लूएंजा का अत्यधिक संक्रामक और घातक रूप तेजी से अपने पैर फैला रहा है, जिससे जंगली पक्षियों और पोल्ट्री में तैयार होने वाले मुर्गे दोनों की मौत हो रही है। आशंका व्यक्त की गई है कि यह अनियंत्रित वायरस पोल्ट्री उद्योग के लिए विनाशकारी साबित हो सकता है।

यह विनाश कुछ वैसा ही हो सकता है जैसा कि आज से सात साल पहले 2015 की जनवरी की शुरुआत में हुआ था, जब इसने पूर्वोत्तर कनाडा में मुर्गियों को मारना शुरू किया था। इस वायरस की पहचान फ्लोरिडा के प्रवासी जलपक्षी में की गई थी और इसने वर्जीनिया और न्यूयॉर्क में बड़ी संख्या में मुर्गियों को संक्रमित किया था। बुधवार, 24 फरवरी को न्यूयार्क टाइम्स में प्रकाशित रिपोर्ट में बताया गया है कि अमेरिका संघीय अधिकारियों ने बताया कि यह अत्यधिक रोगजनक एवियन इन्फ्लूएंजा वायरस देश के सबसे बड़े पोल्ट्री फार्मों में से एक, डेलमारवा प्रायद्वीप पर स्थित एक डेलावेयर वाणिज्यिक चिकन फार्म में पाया गया है। विशेषज्ञों को संदेह है जंगली पक्षी इस वायरस को फैला रहे हैं। पिट्सबर्ग के एक बायोकेमिस्ट हेनरी निमन ने कहा कि यह बहुत ही चिंताजनक है कि इस वायरस का फैलाव तेजी से हो रहा है। ध्यान रहे कि हेनरी वायरस के आनुवंशिक विकास का लगातार अध्ययन करते हैं और इस प्रकार के वायरस के देश में फैलने पर लगातार नजर रखते हैं। वह कहते हैं कि मुझे लगता है कि हम संक्रमण के उच्च स्तर को देख सकते हैं। वहीं दूसरी ओर अमेरिका के अधिकारियों ने पोल्ट्री उत्पादकों से आग्रह किया है कि बीमार या मरने वाले पक्षियों की रिपोर्ट लगातर करें और साथ ही अपने खेतों में जैव सुरक्षा के उपायों को अपनाने में किसी प्रकार की कोताही न बरतें। इन सख्त उपायों में जंगली पक्षियों और घरेलू जानवरों के बीच संपर्क को रोकना भी शामिल है। अमेरिका के कृषि और स्वास्थ्य निरीक्षण सेवा विभाग के प्रवक्ता माइक स्टेपियन ने एक ईमेल के माध्यम से बताया कि यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि एवियन इन्फ्लूएंजा को सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए जोखिम नहीं माना जाता है और यह खाद्य-सुरक्षा के लिए जोखिम नहीं है। हालांकि मनुष्यों के लिए खतरा कम है लेकिन वैज्ञानिक यूरेशियन ॥5ह1 वायरस पर कड़ी नजर रख रहे हैं। रोग नियंत्रण और रोकथाम केंद्रों के अनुसार यह वायरस मनुष्यों के बीच नहीं फैलता है, लेकिन यह 60 प्रतिशत की घातक दर के साथ बेहद घातक भी माना गया है। वर्तमान में अमेरिका में फैल रहा यह वायरस मनुष्यों तक नहीं पहुंचा है, लेकिन वायरोलॉजिस्ट और महामारी विज्ञानियों का कहना है कि पक्षियों के बीच बढ़ता संक्रमण चिंताजनक पहलू है और इसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। अमेरिका के कैंसास राज्य स्थित एक सार्वजनिक स्वास्थ्य पशु चिकित्सक डॉ. गेल हैनसेन ने कहा कि इन्फ्लूएंजा वायरस ऐतिहासिक रूप से मनुष्यों को प्रभावित करने वाली महामारियों से बहुत पीछे है। कुछ चिकित्सा इतिहासकारों ने कान्सास में सेना के रंगरूटों के माध्यम से 1918 के घातक इन्फ्लूएंजा महामारी का पता लगाया है। वह कहते हैं कि वैज्ञानिकों ने हमेशा माना कि अगली महामारी एक श्वसन इन्फ्लूएंजा होगी। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि यह वायरस एशिया, मध्य पूर्व और यूरोप से भी फैल रहा है। हाल के हफ्तों में, 29 यूरोपीय देशों में 300 संक्रमण की सूचना मिली है। इजराइल में तो जंगल में इसके प्रकोप से हजारों सारस मर गए। इस समय इंडियाना और केंटकी के किसान सबसे ज्यादा चिंतित हैं। पिछले दो हफ्तों में इन राज्यों में कई खेतों को बंद कर दिया गया है। किसानों का कहना है कि वे इस बात से दंग रह गए हैं कि वायरस कितनी कुशलता से मारता है। इंडियाना में राज्य के अधिकारी तेजी से अपनी कार्रवाई आगे बढ़ा रहे हैं। एक लाख से अधिक पक्षियों को मार दिया गया है और प्रभावित खेतों के चारों ओर छह मील का घेरा डाल दिया गया है। यूएस पोल्ट्री एंड एग एसोसिएशन के पशु चिकित्सक डॉ. डेनिस हर्ड ने कहा है कि हर कोई हाई अलर्ट पर है और जितना संभव हो सके तैयार रहने की कोशिश कर रहा है क्योंकि हम सभी 2014 और 2015 की तबाही को देख चुके हैं। ध्यान रहे कि 2014-15 में वायरस के प्रकोप को देश के इतिहास में सबसे विनाशकारी माना गया। इसने अंडे की कीमतों में बढ़ोतरी की थी और इसके चलते अमेरिकी सरकार ने इस उद्योग को तीन बिलियन डालर से अधिक की सहायता दी थी। उस समय लगभग 50 मिलियन पक्षी वायरस से मारे गए या इसके प्रसार को रोकने के लिए नष्ट कर दिए गए थे। इनमें से अधिकांश आयोवा और मिनेसोटा में थे। तब के उत्तरी मिनेसोटा के एक उत्पादक 54 वर्षीय जॉन बर्केल अचंभित और घबराहट के साथ इस वायरस के प्रसार को देख रहे हैं। क्योंकि 2015 में वायरस कुछ ही दिनों में उनके खेत में भी बुरी से फैल गया था, जिसके चलते 7,000 पक्षियों में से केवल 70 बचे थे। तब एहतियात के तौर पर स्वास्थ्य अधिकारियों ने उन्हें और उनके बेटे को एंटीवायरल दवा टैमीफ्लू का कोर्स करने की भी सलाह दी थी। अपनी पत्नी और दो बच्चों के साथ खेत में काम करने वाले बर्केल ने कहा कि हमने कभी भी ऐसा विषाणु नहीं देखा है जो विषैला हो। वह बहुत ही भयानक था। ध्यान रहे कि तब से देश भर के कृषि अधिकारियों ने किसानों को इस प्रकार के वायरस की रोकथाम के लिए जैव सुरक्षा उपायों की एक श्रृंखला को अपनाने के लिए प्रेरित किया। उसी समय विशेषज्ञों का कहना है कि संघीय अधिकारियों ने निगरानी की राष्ट्रव्यापी प्रणाली को मजबूत किया। सार्वजनिक स्वास्थ्य पशुचिकित्सक डॉ हैनसेन ने कहा कि उन सभी में एक ही प्रतिरक्षा प्रणाली है इसलिए एक बार वायरस जब एक मुर्गी के अंदर पहुंच जाता है तो यह जंगल में लगी आग की तरह तेजी से फैल जाता है।

साभार - डाउन टू अर्थ

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक सोनल मेहता केलिए प्रतीक्षा ग्राफिक्स, 127 देवी अहिल्या मार्ग, इंदौर (म.प्र.) से मुद्रित एवं 209-बी शहनाई रेसीडेंसी-2 कनाड़िया रोड इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: डॉ. सोनल मेहता फोन : 0731-2595008 Mail.sonal12mehta@yahoo.co.in 9755040008